पूर्वोत्तर प्रभा
(सिक्किम विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)
Journal Home Page: http://supp.cus.ac.in/

प्रेमचन्द के साहित्य में साम्प्रदायिक सद्भावना

डॉ. रहीम मियाँ
एसिसटेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
बानरहाट कार्तिक उराँव हिन्दी गवर्नमेंट कॉलेज, पश्चिम बंगाल

शोध सारांश :

भारत जैसे देश में साम्प्रदायिकता एक कोढ़ के समान है। यह ऐसी है बिमारी है जो भारत देश को अंदर ही अंदर कमजोर करती है। भारत एक ओर जहाँ वैश्वीकृत होकर विकास के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है, वहीं साम्प्रदायिक ताकतें इसके मार्ग में हमेशा रोड़ा लगाते आई है। भारत की आजादी से पहले भी साम्प्रदायिक ताकतें सक्रिय थी, आजादी के बाद एक सपना देखा गया था कि अब भारत साम्प्रदायिकता से मुक्त होकर एक नया राष्ट्र बनेगा, किन्तु पाकिस्तान की स्थापना और कश्मीर मुद्दे ने इसे हमेशा के लिए भारतवासियों के हृदय में बसा दिया। आज भले कश्मीर की समस्या एक समाधान के रुप में दिखाई पड़ रही है, किन्तु केन्द्र शासित प्रदेश बनने के बाद कश्मीर किस मार्ग पर बढेगा, यह तो समय ही बताएगा। उधर पाकिस्तान हर वक्त भारत की शांति भंग करने का नया-नया तरीका इजाद करता रहता है। कश्मीर के केन्द्र शासित प्रदेश बनने को पाकिस्तान किस नजर से देखता है, यह उनके रवैये से पता चल रहा है।

बीज शब्द :

सांप्रदायिक तनाव,राजनीतिकरण,मानवीय मूल्यों का क्षरण,आतंक,दूषित वातावरण,इंसाफ़ आदि।

पराधीनता के दौर में अंग्रेजों ने फूट डालो और राज करो की नीति के तहत साम्प्रदायिकता की आग को हवा देने का काम किया। मुस्लिम लीग की स्थापना से लेकर हिन्दी-उर्दू विवाद तक साम्प्रदायिक तनाव को बढ़ाने की कोशिश अंग्रेजी सरकार द्वारा किया जाता रहा है। यह तनाव इतना बढ़ गया कि आज तक हम उसके प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाए हैं। 1947 से लेकर आज तक भारत वर्ष में हजारों साम्प्रदायिक दंगों की घटनाएँ हो चुकी है। गोधरा, अयोध्या, मुजफ्फरनगर, भागलपुर से लेकर बंगाल तक में साम्प्रदायिकता की

लहरें उठ चुकी है। चाहे किसी रूप में हो, भारत का लगभग हर राज्य इस दंश को झेल चुका है। आज साम्प्रदायिकता धार्मिक और फासीवादी शक्तियों का हथियार है। यह कहते हुए भी कि साम्प्रदायिकता का कोई धर्म नहीं होता, जबरन इसे एक धर्म विशेष से कुछ लोग जोड़ कर ही देखते हैं।

आज इस ग्लोबल युग में जहाँ हम वैज्ञानिक उन्नति एवं शिक्षा के उच्च स्तर पर पहुँच चुके है, लेकिन आज भी हम धर्म के नाम पर लड़ने से बाज नहीं आए है। धर्म की राजनीति भारतवर्ष की राजनीति का प्रमुख अंग है। हर बार राजनीतिक सत्ता द्वारा धर्म को ही राजनीतिक मुद्दा बनाया जाता रहा है। धर्म आज जितना आस्था का विषय है उससे कई अधिक यह राजनीतिक सत्ता का विषय बन चुका है। धर्म के इस राजनीतिकरण ने साम्प्रदायिक तत्वों को बढ़ाने का काम किया है। चुनावी समीकरण ने धर्म को अफीम बना दिया है। चाहे कट्टर हिन्दू हो या कट्टर मुस्लिम, अपने को एक दूसरे से बड़ा एवं महान समझने की होड़ ने सम्प्रदाय विशेष के प्रति जहर घोलने का काम किया है। हर कोई अपने ईश्वर को बचाने के लिए ईश्वर की महान कृति मानव का खून बहाने में अपनी शान समझ रहा है। राजनीति का स्वरूप ऐसा बदला है कि आज हर राजनीतिक पार्टी अपने विरोधी पार्टी के लिए साम्प्रदायिक बन चुका है। समाज में हिंसा बढ़ रही है। सम्प्रदाय विशेष के प्रति जहर घोलने का काम तेज हुआ है। हम मनुष्य से अधिक उसके धर्म को पहचानने लगे हैं। साम्प्रदायिकता के संबंध में डॉ. अरुण होता का कहना एकदम सही है कि "साम्प्रदायिकता न हिन्दू की हत्या करती है और न मुसलमानों की या इसाईयों की बल्कि मनुष्य का खून करती है।"

साम्प्रदायिकता ने मानवीय मूल्यों को धराशायी कर दिया है। ऐसे समय में प्रेमचन्द की रचनाओं से गुजरते हुए साम्प्रदायिक सौहार्द्र की खुशबू को पाया जा सकता है। प्रेमचन्द यह जानते थे कि समाज के लिए साम्प्रदायिकता किस कदर खतरनाक है, इसलिए उन्होंने अपनी रचनाओं में हमेशा यह ध्यान रखा कि किस प्रकार समाज में शांति एवं सौहार्द्र का वातावरण कायम किया जा सके। वे चेतनशील साहित्यकार थे। साहित्यकार का क्या उद्देश्य है, वे भलिभाँति जानते थे। इसलिए 'साहित्य का उद्देश्य' निबंध में वे कहते भी हैं।साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का साधन जुटाना नहीं है, उसका दरजा इतना न गिराइये। वह देश भक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं, बल्कि उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है।

उनका साहित्य हमेशा समाज को सही रास्ता दिखाने वाला साहित्य है। साम्प्रदायिकता संबंधी उनके विचारों को उनके निबंधों एवं आलेखों में देखा जा सकता है। साम्प्रदायिकता को राजनीति से जोड़ते हुए वे कहते है-"क्या साम्प्रदायिकता उसी को कहते हैं जो धर्म और आचार पर आधारित हो, वह भी तो साम्प्रदायिकता है जो राजनीतिक सिद्धांतों पर आधारित होती है।"प्रेमचन्द साम्प्रदायिकता को सामाजिक कोढ़ मानते हैं। 1934 में छपे 'साम्प्रदायिकता और संस्कृति' लेख में वे कहते हैं-"हम तो साम्प्रदायिकता को समाज का कोढ़ समझते हैं जो अपना छोटा सा दायरा बना सभी को उससे बाहर निकाल देती है।"आज

देश में धर्म और संस्कृति के नाम पर साम्प्रदायिक सद्भाव बिगाड़ने की कोशिश की जा रही है। कहीं गौ-रक्षक दल का आतंक है तो कहीं लव जिहाद के नाम पर हत्या। कहीं घर वापसी कर शुद्धिकरण का सिलसिला चल रहा है तो कहीं संस्कृति के नाम पर खास शहरों का नाम परिवर्तन जोरो पर हैं। वास्तव में यह सब कुछ नहीं साम्प्रदायिकता की शांत चिंगारी है जो कभी भी भड़क सकती है। प्रेमचन्द बहुत पहले 15 जनवरी, 1934 को छपे अपने एक लेख 'साम्प्रदायिकता और संस्कृति'में ऐसी परिस्थितियों का कच्चा चिट्ठा खोलते हुए लिखते हैं-"साम्प्रदायिकता सदैव संस्कृति की दुहाई दिया करती है। उसे अपने असली रूप में निकलते शायद लज्जा आती है, इसलिए वह संस्कृति का खोल ओढ़कर आती है। हिन्दू अपनी संस्कृति को कयामत तक सुरक्षित रखना चाहता है, मुसलमान अपनी संस्कृति को।"

खान-पान किसी भी संस्कृति का एक अंग होता है। चाहे हिन्दू हो या मुस्लिम दोनों में खान- पान को लेकर कुछ पाबंदियाँ है, किन्तु उन पाबंदियों को जब राजनीतिक रूप देकर उसका इस्तेमाल साम्प्रदायिकता के लिए किया जाता है तब वह और भी खतरनाक होता है। साम्प्रदायिक ताकतें इसका फायदा उठाकर दो समुदायों को लड़ाता है और हिंसा का विष बोता है। इस सच्चाई को बताते हुए प्रेमचन्द लिखते हैं-"अगर मुसलमान मांस खाते हैं तो हिन्दू भी अस्सी फीसदी मांस खाते हैं, ऊँचे दरजे के हिन्दू भी शराब पीते हैं, ऊँचे दरजे के मुसलमान भी।"खान-पान किसी भी संस्कृति का हिस्सा होता है, किन्तु इसे महज धर्म से जोड़कर राजनेता अपनी राजनीति करते हैं और नुकसान साधारण जनता को उठाना पड़ता है। इसलिए वे आगे कहते भी है-"अब संसार में केवल एक संस्कृति है, और वह है आर्थिक संस्कृति, मगर आज भी हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति का रोना रोये चले जाते हैं।"

प्रेमचन्द के साहित्य का दायरा बहुत विस्तृत है। उन्होंने अपने समय में हिन्दू-मुस्लिम के बीच मनमुटाव को देखा था, इसलिए वे मनुष्यता के हिमायती थे, प्रेम को महत्व देते हैं। अपने 'कर्मभूमि' उपन्यास में उन्होंने मजहब से अधिक प्रेम को महत्व दिया हैं। इस उपन्यास में अमरकान्त और सलीम के बीच गहरी दोस्ती दिखाकर प्रेमचन्द ने समाज में दोनों धर्मों के बीच साम्प्रदायिक सौहार्द्र की स्थापना करते हैं। 'सेवासदन' उपन्यास में उन्होंने वैश्याओं की समस्या दिखाई है। उपन्यास में वैश्याएँ केवल एक समुदाय की नहीं है। वहाँ वेश्या हिन्दू भी है और मुस्लिम भी। उपन्यास में वेश्याओं के शहर से दूर ले जाने वाली बात पर दोनों सम्प्रदायों के बीच तनाव उत्पन्न होता है, किन्तु लेखक यह दिखाते हैं कि वेश्या अन्ततः एक नारी है, वह हिन्दू हो या मुस्लिम, धर्म नहीं, समस्या महत्वपूर्ण है। प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं से हमेशा यह संदेश देने की कोशिश की है कि हिन्दू और मुस्लिम धार्मिक मतभेद भूलाकर एक साथ देशहित का कार्य करें। वे ऐसे लोगों से बचने की सलाह देते हैं जो धर्म के नाम पर लोगों को लड़ाते हैं। 'कायाकल्प' उपन्यास में वे लोगों को सचेत करते हुए कहते हैं-"दोनों कौमों में कुछ लोग ऐसे है जिनकी इज्जत और साख दोनों को

लड़ाते रहने पर ही कायम है। बस, वह एक न एक शिगुफा छोड़ा करते हैं।"साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए यह जरूरी है कि जितना हो सके ऐसे लोगों से हम बचे।

प्रेमचंद की कई कहानियों में हिन्दू पात्रों के साथ मुस्लिम पात्र सहज ही देखे जा सकते हैं। यह उनकी साम्प्रदायिक सद्भावना का प्रमाण ही है कि उन्होंने हिन्दू पात्रों के साथ-साथ मुस्लिम पात्रों के साथ भी इंसाफ ही किया है। 'पंच-परमेश्वर' कहानी की शुरूआत ही ऐसे होती है- अलगु चौधरी और जुम्मन शेख में गाढ़ी मित्रता थी। आज के दुषित वातावरण में इन हिन्दू पात्रों के बीच जहर घुलने लगा है। कहानी में हिन्दू और मुस्लिम के बीच गाढ़ी मित्रता दिखाना प्रेमचन्द की दूरदर्शिता का ही प्रमाण है। वे जानते थे कि एक स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए दोनों सम्प्रदायों के बीच गाढ़ी मित्रता का होना कितना जरूरी है। उनकी चर्चित कहानी ईदगाह में हामिद जैसा मुस्लिम पात्र आज पूरे हिन्दी साहित्य की पहचान है। कहानी में न केवल हामिद जैसे बच्चे की बुद्धिमता दिखाई गई है, बल्कि ईद का माहौल, खुशहाली, बाजार , मेले जैसे दृश्य द्वारा मुस्लिम धर्म के ईद जैसे पवित्र त्योहार की गरिमा भी दिखाई गई है।

प्रेमचन्द जी के साम्प्रदायिक सद्भाव की झलक उनके हिन्दी-उर्दू एकता से भी जाहिर होती है। जिस समय अंग्रेज हमारे अंदर भाषागत द्वेष फैलाकर हमें आपस में लड़ा रहे थे, प्रेमचन्द जी साहित्य में दोनों भाषाओं को अपनाकर सद्भाव की स्थापना कर रहे थे। यही कारण है कि आज वे जितना हिन्दी के लेखक है उतना ही उर्दू के भी।आज जहाँ एक धर्म दूसरे धर्म को नीचा दिखाकर महान बनना चाह रहा है, मंदिर और मस्जिद को राजनीतिक मुद्दा बनाकर खेल खेला जा रहा है, वहीं दूसरी ओर धर्म के नाम पर खूनी खेल जारी है, मंदिर और मस्जिद पर हमले हो रहे हैं। प्रेमचन्द अपनी कहानी 'मंदिर और मस्जिद' में ऐसे परिवेश का विरोध करते हैं। कहानी में प्रेमचन्द यह दिखाते हैं कि चौधरी इतर अली जो जमींदार है, वे हर हमला का विरोध करते हैं। हमला मंदिर पर हो या मस्जिद पर। इस प्रयास में उसके दामाद और सेवक की मृत्यु भी हो जाती है, किन्तु वे पीछे नहीं हटते हैं। वे कहते हैं-"किसी के दीन को तौहिन करने से बड़ा और कोई गुनाह नहीं।" आज हमारे समाज को जरूरत है तो चौधरी इतर अली जैसे लोगों की। तभी समाज में शांति लाई जा सकती है। घृणा और नफरत से किसी समाज का न तो आज तक भला हुआ है और न कभी होगा।

प्रेमचन्द शोषण के विरोधी थे। शोषित हिन्दू हो या मुस्लिम, सबको बराबर समझते थे। 'हिंसा परमो धर्म' कहानी में जामिद कहता भी है-"ठाकुर जी तो सबके ठाकुर जी है – क्या हिन्दू, क्या मुसलमान।"प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं द्वारा हर प्रकार के शोषण का विरोध किया है, शोषण चाहे किसी भी पात्र का हो। चाहे वह शोषण निर्मला के साथ हो या सकीना के साथ, मनोहर के साथ हो या कादिर मियाँ के साथ। उनके साहित्य में हिन्दू पात्र के साथ ही मुस्लिम पात्रों की भरमार हैं। उनकी 'मुक्तिधन' कहानी में जो किसान है वह मुस्लिम है। वे किसानों की समस्या को उसी रूप में देखते हैं। चाहे वह किसान हिन्दू हो या मुस्लिम। इस कहानी में मुस्लिम किसान की समस्या वैसी ही है जैसी उनकी अन्य कहानियों में हिन्दू किसान

की है। अपने नाटक 'कर्बला' में उन्होंने हिन्दू और मुस्लिम दोनों को कुर्बानी करते हुए दिखाया है। उनका समय स्वतंत्रता संग्राम का समय था। वे जानते थे कि देश की आजादी के लिए यह जरूरी है कि हमारे बीच एकता बनी रहे। एकता ही हमारी ताकत है। वे हिन्दू – मुस्लिम एकता पर जोर देते हुए नवम्बर 1931 में लिखे लेख 'असली हिन्दू – मुस्लिम लड़ाई तो कभी हुई ही नहीं' में लिखते हैं-

दिलों में गुबार भरा हुआ है, फिर मेल कैसे हो। मैली चीज पर कोई रंग नहीं चढ़ सकता। हम गलत इतिहास पढ़- पढ़ कर एक दूसरे के प्रति तरह-तरह की गलत फहमियाँ दिल में भरे हुए है, और उन्हें किसी तरह दिल से नहीं निकालना चाहते, मानों उन्हीं पर हमारे जीवन का आधार हो।हिन्दू होते हुए भी उन्होंने कर्बला जैसी ऐतिहासिक एवं धार्मिक घटना पर लेखनी चलाते हुए कर्बला नाटक लिखकर हिन्दी साहित्य को एक ऐसा नाटक दिया जिसमें इस्लाम का ऐतिहासिक पात्र हुसैन के चरित्र के गुणों को हमारे सामने लाकर पेश किया। वे नाटक की भूमिका में कहते भी हैं- कितने खेद और लज्जा की बात है कि कई शताब्दियों से मुसलमानों के साथ रहने पर भी अभी तक हम लोग प्रायः उनके इतिहास से अनभिज्ञ हैं। हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य का एक कारण यह भी है कि हम हिन्दुओं को मुस्लिम महापुरुषों के सच्चरित्रों का ज्ञान नहीं।

आज देश के सर्वांगिण विकास के लिए यह आवश्यक है कि हम जितना हो सके साम्प्रदायिकता की आग से बचे। ऐसे संकीर्ण मानसिकता वाले लोगों के विचारों का विरोध करें। प्रेमचन्द का साहित्य हर कदम पर मशाल लेकर साम्प्रदायिक सद्भाव का संदेश देती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. होता, अरुण. आलेख 'साम्प्रदायिकता का संदर्भ और प्रेमचन्द का साहित्य'. http://gadyakosh.org
2. प्रेमचन्द. साहित्य का उद्देश्य. अनन्या प्रकाशन. 2022 संस्करण, 2022
3. प्रेमचन्द. आलेख 'साम्प्रदायिकता और संस्कृति'. 15.01.1934
4. प्रेमचन्द. कर्मभूमि. वाणी प्रकाशन. 2002
5. प्रेमचन्द. 'हिंसा परमो धर्म'. मानसरोवर भाग-5. सुमित्र प्रकाशन. 2008
6. प्रेमचन्द. 'पंच परमेश्वर'. मानसरोवर भाग-7. सुमित्र प्रकाशन. 2008
7. प्रेमचन्द. आलेख 'आसली हिन्दू मुस्लिम लड़ाई तो कभी हुई ही नहीं'. नवम्बर, 1931
8. प्रेमचन्द. 'कर्बला'. साहित्य सरोवर. पहला संस्करण, 2021
9. प्रेमचन्द. 'सेवासदन'. प्रभात प्रकाशन. पहला संस्करण, 2016
10. प्रेमचन्द. 'कायाकल्प'. मनोज प्रकाशन. 2019